जैव विविधता क्यों बचाएं और कैसे बचाएं?

डॉ. अरविंद गुप्ते

राष्ट्र संघ ने वर्ष 2010 को अंतर्राष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष घोषित किया है। इस वर्ष पूरे संसार में विविध आयोजनों के माध्यम से जैव विविधता के समक्ष विभिन्न खतरों और इनकी वजह से पूरे विश्व की इकॉलॉजी पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों की ओर ध्यान आकर्षित किया जाएगा तथा इन खतरों से निपटने के उपायों पर चर्चा की जाएगी।

क्या है यह जैव विविधता और क्यों यह मानव जाति के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण है? जैव विविधता शब्द का उपयोग सबसे पहले वन्य जीव वैज्ञानिक और संरक्षणविद रेमंड डासमन ने साठ के दशक में किया था, किंतु यह अस्सी के दशक में व्यापक रूप से प्रचलित हुआ। जैव विविधता की अलग-अलग परिभाषाएं दी गई हैं। रियो डि जिनेरो में1992 में आयोजित राष्ट्र संघ पृथ्वी शिखर सम्मेलन में जैव विविधता को इस प्रकार परिभाषित किया गया था: 'सभी प्रकार के इकोसिस्टम्स, जिनमें सभी स्थलीय और जलीय स्रोत शामिल हैं, में रहने वाले जीवधारियों में पाई जाने वाली विविधता। इससे तात्पर्य एक प्रजाति के भीतर, विभिन्न प्रजातियों के बीच और विभिन्न इकोसिस्टम्स के बीच पाई जाने वाली विविधता से है।' चूंकि राष्ट्र संघ के जैव विविधता सम्मेलन द्वारा इस परिभाषा को मान्य किया गया है, इसे अधिकृत परिभाषा माना जा सकता है। पाठ्यपुस्तकों में जैव विविधता की यह परिभाषा प्रचलित है: 'जैविक संगठन के सभी स्तरों पर जीवन में विविधता'। इसमें आणविक से लेकर इकोसिस्टम तक के सभी स्तर शामिल हैं।

संसार में पाई जाने वाली जैव विविधता पिछले 600 करोड़ वर्षों के दौरान हुए विकास का परिणाम है। लगभग 60 करोड़ वर्ष पहले तक पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीवधारियों में केवल बैक्टीरिया और एककोशिकीय जीव थे। इसके बाद विभिन्न प्रकार के बहुकोशिकीय जंतुओं का विकास हुआ। पिछले 40 करोड़ वर्षों में समय-समय पर ऐसी घटनाएं होती रहीं जिनके कारण जीवधारियों का बड़े पैमाने पर विलोप हुआ और जैव विविधता में कमी आई। पिछले कुछ लाख वर्षों में पृथ्वी पर सबसे अधिक जैव विविधता विकसित हुई है।

अधिकांश जीव शास्त्री इस बात पर सहमत हैं कि मनुष्य के पृथ्वी पर आने के बाद से उसकी गतिविधियों के कारण प्रजातियों के विलोप का एक नया युग शुरू हुआ है। एक अनुमान के अनुसार यदि विलोप इसी गति से चलता रहा तो आने वाले 100 वर्षों में अधिकांश प्रजातियां पृथ्वी से विलुप्त हो जाएंगी। सन 2006 में कई प्रजातियों को संकटग्रस्त घोषित किया गया था। किंतु कई वैज्ञानिकों का विचार है कि वास्तव में संकटग्रस्त प्रजातियों की संख्या आधिकारिक आंकड़ों से कहीं अधिक, लाखों में है। लगभग 17,000 प्रजातियां तो विलुप्त होने की कगार पर हैं।

यदि हम किसी इकोसिस्टम को देखें तो उसमें सूक्ष्म से लेकर बड़े से बड़े पौधों और जंतुओं तक विभिन्न जीवधारी मिलते हैं। इन सबका जीवन एक-दूसरे पर निर्भर होता है और इनका आपसी सम्बंध एक जटिल जाल के समान होता है। ज़ाहिर है कि इस जाल के एक घटक के नष्ट होने पर पूरे जाल यानी पूरे तंत्र पर प्रतिकूल असर पड़ता है। जैव विविधता के कई प्रत्यक्ष व परोक्ष लाभ हैं जिनकी चर्चा आगे की गई है।

कृषि

हर प्रजाति में कई उप-प्रजातियां होती हैं जिनमें थोड़ी-थोड़ी अनुवांशिक भिन्नताएं पाई जाती हैं। इसके चलते हर उप-प्रजाति किसी न किसी लक्षण में अन्य उप-प्रजातियों से भिन्न होती है। उदाहरण के लिए किसी उप-प्रजाति में किसी रोग विशेष के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता पाई जाती है जो अन्य उप-प्रजातियों में नहीं होती। यह भी हो सकता है कि किसी उप-प्रजाति में किसी एक रोग के लिए प्रतिरोध क्षमता हो, किंतु अन्य किसी रोग के लिए न हो। यदि किसी फसल पर किसी रोग का हमला हो जाए तो इस विविधता

का फायदा उठा कर ऐसी उप-प्रजाति ढूंढी जा सकती है जिसमें उस रोग के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता हो। कुछ उदाहरणः

1. सन 1846 में आयरलैंड में आलू की फसल पर *पोटेटो ब्लाइट* नामक रोग का हमला हुआ था और इसके परिणामस्वरूप फैली भुखमरी से लगभग 10 लाख लोग मारे गए थे और इतने ही लोग बेघर हुए थे। इस महामारी के पीछे यह कारण था कि आलू की दो ही उप-प्रजातियों की फसल बोई गई थी और इन दोनों में इस रोग के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता नहीं थी।

2. सन 1970 के दशक में दक्षिण एशिया में चावल की फसल पर *राइस ग्रासी स्टन्ट वायरस* का हमला हुआ था और बड़े पैमाने पर फसलें नष्ट हो गई थीं। अंततः एक ऐसी भारतीय उप-प्रजाति का पता चला जो इस रोग की प्रतिरोधी थी। इस उप-प्रजाति का अन्य उप-प्रजातियों के साथ संकरण किया गया और प्रतिरोधी बीज तैयार किए गए।

3. श्रीलंका, ब्राज़ील और मध्य अमेरिकी देशों में 1970 में कॉफी के बागानों पर *कॉफी रस्ट* नामक रोग का हमला हुआ था। इसकी प्रतिरोधी उप-प्रजाति इथियोपिया में मिली थी।

कृषि के इतिहास में ऐसे कई उदाहरण हैं जब जैव विविधता के अभाव में खाद्यान्न संकट खड़ा हो गया।

स्वास्थ्य

नई-नई औषधियों की खोज और इनके स्रोतों की उपलब्धि स्वास्थ्य के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। ऐसी कई औषधियां हैं जो प्राकृतिक स्रोतों (पौधों, जंतुओं और सूक्ष्मजीवों) से प्राप्त होती हैं। संसार की लगभग 80 प्रतिशत आबादी इस प्रकार की आधुनिक और परम्परागत औषधियों पर निर्भर है। किंतु यह भी एक तथ्य है कि औषधियां प्राप्त करने की दृष्टि से संसार की कुल प्रजातियों के एक बहुत छोटे भाग पर शोध कार्य हुआ है। 1980 के दशक से औषधि निर्माताओं का ज़ोर प्राकृतिक स्रोतों की बजाय रासायनिक विधियों से निर्मित औषधियों पर अधिक रहा है। किंतु इनके परिणाम संतोषजनक नहीं रहे हैं। इसके विपरीत, ऐसे प्रमाण हैं कि प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त औषधियों के क्षेत्र में अनुसंधान और नवाचार स्वास्थ्य और आर्थिक दोनों दृष्टि से लाभदायक हो सकते हैं। औषधियां प्राप्त करने की दृष्टि से समुद्री इकोसिस्टम पर तुलनात्मक रूप से कम शोध हुआ है।

वैसे यह भी ध्यान रखना चाहिए कि औषधियों के निर्माण या अन्य किसी भी उद्देश्य के लिए जैविक सम्पदा का बहुत अधिक दोहन किए जाने पर जैव विविधता में कमी होने का खतरा बना रहता है।

व्यापार एवं उद्योग

जैविक स्रोतों से कई प्रकार की औद्योगिक सामग्री प्राप्त की जाती है। इनमें निर्माण सामग्री, धागे, रंग, रेज़िन, रबर, तेल इत्यादि शामिल हैं। प्रजातियों का विनाश किए बिना और अधिक प्रकार के जीवधारियों से सामग्री प्राप्त करने की काफी संभावनाएं मौजूद हैं। इसके अलावा, जैव विविधता और उससे प्राप्त पर्यावरणीय सेवाएं किसी भी स्वस्थ अर्थतंत्र के लिए मूलभूत रूप से आवश्यक होती हैं। ये पर्यावरणीय सेवाएं दिखाई नहीं देतीं, किंतु पूरे विश्व के लिए ये बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। उदाहरण के लिए, जैव विविधता के कारण हमारे वातावरण और जल का रासायनिक संतुलन बना रहता है। जल के शुद्धिकरण, पोषक पदार्थों के पुनर्चक्रण और मिट्टी को उपजाऊ बनाने में जैव विविधता की प्रत्यक्ष भूमिका होती है। प्रयोग दर्शाते हैं कि इंसान द्वारा कृत्रिम रूप से इकोसिस्टम बनाया जाना संभव नहीं है। उदाहरण के लिए, कीटों द्वारा किए जाने वाले परागण के स्थान पर अन्य किसी विधि से परागण कराना संभव ही नहीं है, और केवल यही एक गतिविधि मनुष्य को प्रति वर्ष अरबों डॉलर मूल्य के बराबर सेवा प्रदान करती है। जैव विविधता किसी भी इकोसिस्टम को स्थिरता प्रदान करती है। जितनी अधिक जैव विविधता होगी, प्राकृतिक या मानव-जनित कारणों से तंत्र पर पड़ने वाला प्रतिकूल प्रभाव उतना ही कम होगा।

अब विश्व स्तर पर यह एहसास हो रहा है कि संसाधनों (पानी की मात्रा व गुणवत्ता, लकड़ी, कागज़, धागे, खाद्यान्न, औषधियां) की सुरक्षा में जैव विविधता की निर्णायक भूमिका

है। घटती जैव विविधता को व्यापार एवं उद्योग के विकास और अर्थ व्यवस्था के लिए एक बड़े खतरे के रूप में देखा जाने लगा है।

सांस्कृतिक महत्व

कई लोगों के लिए पदयात्रा, पक्षी अवलोकन या प्रकृति का अवलोकन महत्वपूर्ण गतिविधियां होती हैं। ये जैव विविधता के ही आयाम हैं। प्राचीन समय से जैव विविधता ने कवियों, चित्रकारों, मूर्तिकारों और लेखकों को प्रेरित किया है। बागवानी, एक्वेरियम का रख-रखाव, तितलियों का संग्रह वगैरह ऐसी गतिविधियां हैं जो जैव विविधता से जुड़ी हैं। आम व्यक्ति के लिए किसी उद्यान या चिड़ियाघर की सैर एक आनंददायक और सांस्कृतिक अनुभव होता है। यह कहा जा सकता है कि मानव के लिए जैव विविधता सौंदर्यपरक और आध्यात्मिक दोनों दृष्टि से मूल्यवान होती है। अतः जंगलों, नदियों, पहाड़ों जैसे विविध पर्यावरणों का संरक्षण केवल आर्थिक उद्देश्यों से नहीं बल्कि इन विभिन्न उद्देश्यों से किया जाना चाहिए।

जैव विविधता पर खतरे

पिछले 100 वर्षों में जैव विविधता का क्षरण बहुत तेज़ी से हुआ है। कई अध्ययनों का निष्कर्ष है कि सन 2050 तक जीवधारियों की 30 प्रतिशत प्रजातियां विलुप्त हो जाएंगी। वनस्पतियों की ज्ञात प्रजातियों की संख्या के आठवें भाग पर विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। सभी वैज्ञानिक इस बात पर सहमत हैं कि प्रजातियों के विलुप्त होने की वर्तमान दर मनुष्य के इतिहास की सबसे ऊंची दर है। जैव विविधता के लिए निम्नलिखित कारकों से खतरा पैदा होता हैः

• प्राकृतवासों का विनाशः सन 1000 से 2000 के बीच हुए प्रजातियों के विलोप का प्रमुख कारण मनुष्य की गतिविधियां, विशेष रूप से पौधों और जंतुओं के प्राकृतवासों का विनाश रहा है। मनुष्य द्वारा कार्बनिक पदार्थों के उपयोग के कारण जंगलों, विशेष रूप से ऊष्णकटिबंधीय जंगलों, का तेज़ी से विनाश हो रहा है। यद्यपि विलुप्त हो रही सब प्रजातियों का उपयोग मनुष्य भोजन के रूप में नहीं करता, किंतु उनके प्राकृतवासों को खेतों, चारागाहों और फलोद्यानों में बदले जाने के कारण उनका जैव-पदार्थ (biomass) अप्रत्यक्ष रूप से मानव के भोजन में परिवर्तित हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार संसार के कुल जैव-पदार्थ का एक-तिहाई भाग मनुष्य, उसके पालतू पशुओं और फसलों में ही समाया हुआ है।

• बढ़ती जनसंख्या के कारण अधिक खाद्यान्न उत्पादन की आवश्यकता पड़ती है और इस कारण अधिक भूमि को कृषि कार्य के लिए लेना पड़ता है। इसी के कारण वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, और मिट्टी प्रदूषण भी बढ़ते हैं।

• बाहरी प्रजातियांः पृथ्वी कई ऐसे क्षेत्रों में बंटी हुई है जो पहाड़ों, समुद्रों जैसे अगम्य अवरोधों के कारण एक-दूसरे से अलग हैं और उनमें वहां की विशिष्ट परिस्थितियों के अनुरूप जीव प्रजातियों का विकास हुआ है। मनुष्य के विकास से पहले उक्त अवरोधों के कारण किसी क्षेत्र की प्रजातियों के लिए अन्य किसी क्षेत्र में घुसपैठ करना संभव नहीं होता था। किंतु मनुष्य ने जीवधारियों को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में ले जाना शुरू कर दिया और इसके परिणाम विनाशकारी सिद्ध हुए। किसी क्षेत्र में आने वाली बाहरी प्रजाति में कुछ विशिष्ट गुण हों तो वह मूल प्रजातियों को प्रतिस्पर्धा में पछाड़ देती है और स्वयं प्रमुख प्रजाति बन जाती है। इस प्रकार कई प्रजातियां नष्ट हो जाती हैं और एक प्रजाति का वर्चस्व हो जाता है। इसका परिणाम उस

बाहरी प्रजातियां और जैव विविधता

वैसे तो भारत में इसके कई उदाहरण हैं किंतु सबसे सटीक उदाहरण जलकुम्भी का है। उन्नीसवीं सदी में इस विदेशी पौधे को एक अंग्रेज़ कोलकाता स्थित अपने निवास के पानी के कुंड में डालने के लिए लाया था क्योंकि इसके फूल काफी सुंदर होते हैं। इस पौधे ने वहां से फैलना शुरू किया और अब यह पूरे देश के जलाशयों में फैल गया है। यह जिस जलाशय में फैल जाता है उसमें स्थित अधिकांश अन्य जीव नष्ट हो जाते हैं।

क्षेत्र की जैव विविधता कम या समाप्त होने के रूप में सामने आता है।

इसी से मिलता-जुलता खतरा अनुवांशिक प्रदूषण के कारण होता है। यदि किसी मूल निवासी प्रजाति के साथ अन्य प्रजातियों का अनियंत्रित तरीके से संकरीकरण किया जाए तो यह संभावना बन जाती है कि मूल प्रजाति का जीन भंडार नष्ट हो जाए और वह प्रजाति विलुप्त हो जाए। प्रकृति में जीन प्रवाह (एक प्रजाति से दूसरी प्रजाति में जाना) होता रहता है और जैव विकास के लिए यह एक आवश्यक प्रक्रिया है। किंतु बाहरी प्रजातियों के साथ चाहा या अनचाहा संकरीकरण हानिकारक हो सकता है, विशेष रूप से दुर्लभ प्रजातियों के मामले में। भारत में हरित क्रांति

अंतर्राष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष 2010

1992 में रियो डि जिनेरो में आयोजित राष्ट्र संघ पृथ्वी शिखर सम्मेलन में कई देशों ने जैव विविधता से सम्बंधित समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। इन देशों ने सुझाव दिया था कि वर्ष 2010 को अंतर्राष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष घोषित किया जाए। इस सुझाव पर संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर 2006 में मुहर लगा दी। इसका नारा है 'जैव विविधता हमारा जीवन है'।

इसके उद्देश्य निम्नानुसार हैंः

1. जन साधारण को जैव विविधता के संरक्षण के महत्व और इसके समक्ष खतरों से परिचित कराना।
2. समुदायों और सरकारों के द्वारा जैव विविधता संरक्षण के लिए किए गए सफल प्रयासों का प्रचार करना।
3. व्यक्तियों, संगठनों और सरकारों को जैव विविधता का क्षरण रोकने के लिए तुरंत कार्रवाई हेतु प्रेरित करना।
4. जैव विविधता के समक्ष खतरों से निपटने के लिए नवाचारी हल ढूंढना।
5. 2010 के बाद की जाने वाली कार्रवाई के सम्बंध में हितधारियों के साथ संवाद शुरू करना।

पूरे वर्ष में इसके सम्बंध में निम्नलिखित गतिविधियों का आयोजन किया जाएगाः

1. 11 जनवरी 2010 को बर्लिन में जैव विविधता वर्ष का औपचारिक उद्‌घाटन।
2. 21-22 जनवरी 2010 को पेरिस में युनेस्को की जैव विविधता प्रदर्शनी का अनावरण।
3. 12 से 28 फरवरी 2010 तक नई दिल्ली में टिकाऊ विकास पर शिखर सम्मेलन।
4. 13 से 15 मार्च 2010 तक दोहा में 'ज़ोखिमग्रस्त वन्य प्रजातियों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार' पर सम्मेलन।
5. 19 से 21 मई 2010 तक नैरोबी में 'जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, प्रभाव, अनुकूलन और उपाय' पर सम्मेलन।
6. जून/जुलाई 2010 में मॉन्ट्रीयाल में जैविक एवं सांस्कृतिक विविधता पर युनेस्को अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन।
7. अंतर्राष्ट्रीय वर्ष के समापन के रूप में संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में जैव विविधता पर एकदिवसीय उच्चस्तरीय बैठक सितम्बर 2010 में आयोजित की जाएगी जिसमें राष्ट्राध्यक्ष निम्नलिखित मुद्दों पर चर्चा करेंगे :
   - अ. जैव विविधता और जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन और उसके प्रभाव को कम करने के उपाय।
   - ब. विकास और गरीबी उन्मूलन में जैव विविधता की भूमिका तथा सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य प्राप्त करने के उपाय।
   - स. जैव विविधता पर समझौते के लिए अगले दशक की रणनीति और योजना।
8. इन चर्चाओं के निष्कर्ष को नागोया (जापान) में अक्टूबर 2010 में आयोजित होने वाले जैव विविधता शिखर सम्मेलन में प्रस्तुत किया जाएगा। इस सम्मेलन में सहभागी होने वाले देश पृथ्वी पर जीवन के संरक्षण के लिए नए लक्ष्य निर्धारित करेंगे।

के समय संकर फसलों को बढ़ावा दिया गया, किंतु इसके कारण विभिन्न खाद्यान्नों की कई मूल किस्में समाप्त हो गईं। इनमें जो अच्छे गुण थे वे भी विलुप्त हो गए हैं क्योंकि संकर किस्मों में वे गुण नहीं होते।

• प्रदूषणः अधिकांश जीवधारियों पर वायु और जल प्रदूषण का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसका एक दुखद उदाहरण भारतीय गिद्ध है। भारत में मवेशियों को डिक्लोफेनेक नामक दर्द निवारक दवा अनियंत्रित मात्रा में दी जाती है। यह दवा उनकी मांसपेशियों में संचित हो जाती है। जब गिद्ध किसी मृत मवेशी को खाते हैं तब यह दवा उनके लिए घातक साबित होती है। इसके परिणामस्वरूप पिछले लगभग 30-40 वर्षों में भारत के अधिकांश गिद्ध विलुप्त हो चुके हैं। इसका पर्यावरण पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

• वैश्विक तपनः वैश्विक तपन के फलस्वरूप जलवायु और तापमान में होने वाले व्यापक बदलावों का अधिकांश वनस्पति और जंतु प्रजातियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और उनके विलुप्त होने का खतरा पैदा हो जाता है।

• अतिदोहनः मनुष्य द्वारा कुछ जंतु और वनस्पति प्रजातियों का बहुत अधिक दोहन किए जाने के कारण वे या तो विलुप्त हो गई हैं या विलुप्त होने की कगार पर हैं।

जैव विविधता का संरक्षण

जैव विविधता के विलोप की बढ़ती दर से चिंतित होकर वैज्ञानिकों ने बीसवीं शताब्दी के मध्य से इस समस्या से निपटने के तरीकों पर विचार करना शुरू किया। दो प्रकार की रणनीतियों के सुझाव दिए गए हैं। सुरक्षात्मक विधि के अनुसार ऐसे क्षेत्र बनाने का सुझाव दिया गया जो मानव के हर प्रकार के हस्तक्षेप और दोहन से मुक्त हों। इसके विपरीत संरक्षणात्मक विधि में इस बात पर ज़ोर दिया जाता है कि यथार्थवादी नीतियों के माध्यम से मानव संस्कृति और समाज की ज़रूरतों और जैव विविधता के संरक्षण के बीच सामंजस्य बैठाया जाए। इसके लिए संरक्षणवादी जीव शास्त्रियों के द्वारा अनुसंधान के माध्यम से योजनाएं बनाई जा रही हैं। यह विज्ञान का एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें जीव शास्त्र के अलावा इकॉलॉजी, समाज विज्ञान, शिक्षा और विज्ञान की अन्य शाखाओं के पहलू जुड़े होते हैं। चूंकि जैव विविधता के संरक्षण की योजनाएं स्थानीय, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर समुदायों को प्रभावित करती हैं, इनमें शासकीय नीति-निर्धारकों से सम्पर्क का भी प्रावधान करना पड़ता है।

मूल निवासी प्रजातियों के उनके पुराने परिवेश में पुनर्वास के लिए जीन भंडारों का निर्माण और बाहरी प्रजातियों का उन्मूलन आदि उपाय आवश्यक होते हैं। इसके लिए पहले यह निर्धारित करना पड़ता है कि मूल निवासी प्रजातियां कौन-सी थीं और बाहरी प्रजातियां (जिनका उन्मूलन ज़रूरी है) कौन-सी हैं। इन उपायों के अलावा रासायनिक कीटनाशियों के स्थान पर जैविक कीटनाशियों के उपयोग को बढ़ावा देना जैसे उपाय भी किए जाते हैं।

जैव विविधता कार्य योजना

1992 में जैव विविधता पर आयोजित सम्मेलन में लिए गए निर्णय के अनुसार संसार के हर देश को जैव विविधता के संरक्षण के लिए एक कार्य योजना बनाना है। 2009 तक 191 देशों ने इस सम्मेलन की सदस्यता स्वीकार कर ली थी किंतु इनमें से बहुत कम देशों ने कार्य योजना बनाई है।

जैव विविधता कार्य योजना में निम्नलिखित प्रमुख बिंदु होते हैं:

1. चुनिंदा प्रजातियों या आवासों से सम्बंधित जैविक जानकारी इकट्ठा करना।

2. निर्धारित इकोसिस्टम में प्रजातियों के संरक्षण की स्थिति का मूल्यांकन करना।

3. संरक्षण और पुनर्वास के लिए लक्ष्य निर्धारित करना।

4. कार्य योजना के क्रियान्वयन के लिए बजट बनाना, समय सीमाएं निर्धारित करना और संस्थागत सहयोग के स्रोत तय करना।

• प्रजाति-आधारित योजनाः कार्य योजना का बुनियादी अंश एक-एक प्रजाति के विभिन्न पहलुओं के बारे में विस्तृत दस्तावेज़ीकरण करना है। इसमें उस प्रजाति का वितरण, आवास, व्यवहार, प्रजनन से सम्बंधित जानकारी, अन्य प्रजातियों से सम्बंध, संरक्षण की स्थिति आदि के बारे में विस्तृत जानकारी का समावेश होता है। फिर उसके संरक्षण

या पुनर्वास के माध्यम से उसकी संख्या को निर्धारित लक्ष्य तक लाने के लिए योजना बनाई जाती है। बचाव के उपायों में प्राकृतवास का पुनरूद्धार, उसे शहरीकरण, चराई तथा कृषि कार्य में लिए जाने से बचाना, झूम खेती पर रोक, ज़ोखिमग्रस्त प्रजातियों को पकड़ने या शिकार करने पर रोक, कीटनाशियों और अन्य प्रदूषकों में कमी लाना वगैरह शामिल हैं। योजना में इस बात का भी उल्लेख होना चाहिए कि किन सरकारी या गैर-सरकारी एजेंसियों को इस रणनीति के क्रियान्वयन की ज़िम्मेदारी दी जाएगी और इसके लिए कितना बजट उपलब्ध होगा।

यह अंश बुनियादी होते हुए भी सबसे कठिन है। संसार की अधिकांश प्रजातियां सही ढंग से परिभाषित ही नहीं की गई हैं। इसके लिए बहुत अधिक जानकारी इकट्ठा करने की ज़रूरत होती है। संसार के कुछ भागों की तो वैज्ञानिकों ने व्यवस्थित रूप से छानबीन तक नहीं की है।

• प्राकृतवास-आधारित योजनाः यदि किसी प्राकृतवास में कई ऐसी प्रजातियां हों जो खतरे में हैं तो यह उचित होता है कि पूरे प्राकृतवास के संरक्षण की योजना बनाई जाए। इसमें भी सब प्रजातियों की सूची बनाना, प्राकृतवास की सीमाएं निर्धारित करना और उसकी गुणवत्ता निर्धारित करना आदि गतिविधियां सम्मिलित हैं। इसके बाद ऊपर दी गई रणनीतियों को अपनाते हुए प्राकृतवास के संरक्षण या बहाली के लिए योजना बनाई जाती है।

कार्य योजना की आलोचना

कुछ विकासशील देश इस कार्य योजना की आलोचना इस आधार पर करते हैं कि इसमें कृषि और औद्योगिक उत्पादन की तुलना में वन्य जीवन और पौध संरक्षण को अधिक महत्व दिया जाता है। इसके अलावा, बढ़ती आबादी से इसका टकराव होता है। इस प्रकार की योजनाओं को बनाना एक खर्चीला काम होता है और कई गरीब देशों के लिए योजना बनाना भी संभव नहीं होता। ***(स्रोत फीचर्स)***